भाजपा और गठबंधन राजनीति
The BJP and Coalition Politics

अदनान फ़ारूक़ी और ईश्वरन श्रीधरन
Adnan Farooqui & Eswaran Sridharan
November 3, 2014

सन् 2014 से पूर्व भारत में लगातार (1989 से 2009 तक) सात ऐसे चुनाव हुए, जिनमें किसी भी एक दल को लोकसभा में पूर्ण बहुमत नहीं मिला. इसके फलस्वरूप अल्पसंख्यक सरकारें बनीं. इनमें वे ढुलमुल अल्पसंख्यक सरकारें भी थीं, जो बाहरी समर्थन पर निर्भर थीं.

2014 के चुनाव में भारतीय जनता पार्टी (भाजपा) को पूर्ण बहुमत मिला और उसके बाद अक्तूबर 2014 में हुए महाराष्ट्र और हरियाणा के विधान सभा के चुनावों में भी उसने कांग्रेस पार्टी से सत्ता छीन ली. अब सवाल उठता है कि ऐसे हालात में गठबंधन राजनीति की कोई भूमिका है या नहीं. हमारे मत में इसका स्पष्ट उत्तर है, हाँ.. भूमिका है ; लोकसभा में बहुमत प्राप्त करने के लिए चुनाव-पूर्व गठबंधन भाजपा के लिए आवश्यक था और महाराष्ट्र में चुनाव के बाद का गठबंधन आवश्यक है. भविष्य में भी विधेयक पारित कराने के लिए और पार्टी की पहुँच को बढ़ाने के लिए गठबंधन बनाये रखना आवश्यक होगा.

2014 में चुनाव-पूर्व गठबंधन का महत्व

समकालीन भारतीय राजनीति में राष्ट्रीय दलों के बीच चुनाव-पूर्व गठबंधन होने की बात तो बहुत स्पष्ट है. यदि भारत की पहली *'पास्ट-द-पोस्ट'* चुनावी प्रणाली की बात की जाए तो सीटें जीतने के लिए चुनाव-क्षेत्र के स्तर पर मतों का एकत्रीकरण आवश्यक होता है. इसका अर्थ यह है कि राष्ट्रीय दल प्रणाली को अगर साफ़ तौर पर राज्य की दलीय प्रणाली में विभाजित किया जाए तो राज्य स्तर पर अच्छा-खासा वोट शेयर हासिल करने वाली पार्टियों के साथ गठबंधन करने से चुनाव-क्षेत्र के स्तर पर उन राज्यों के वोट शेयर के एकत्र होने में मदद मिलती है, जहाँ राष्ट्रीय दलों की स्थिति अपने बल पर मज़बूत नहीं होती. इसलिए चुनाव-पूर्व गठबंधन से सीटों की संख्या बढ़ने की पूरी संभावना रहती है, भले ही इसके लिए गठबंधन के सहयोगी दलों को कुछ सीटें क्यों न देनी पड़ें और चुनाव के बाद ऐसे सहयोगी दलों को सरकार में भी क्यों न शामिल करना पड़े.

इसका अंतर्निहित सिद्धांत यही है कि ऐसे राज्यों में जहाँ भारी मात्रा में संभावित वोट शेयर के अंतराल को अन्य पक्ष द्वारा पूरा किये जाने की संभावना है, अन्य पक्ष को संभावित वोट शेयर का लाभ मिल सकता है. संक्षेप में, चुनावी जीत के कथित महत्व के कारण ही ऐसे राज्यों में जहाँ उसे पिछले चुनावों के मुकाबले कहीं अधिक सीटें आबंटित की गई हैं, राज्य की पहली या दूसरी पार्टी के साथ चुनाव गठबंधन किया जा सकता है.

सन् 1989 से भाजपा का विस्तार कुछ हद तक तो अपनी विचारधारा के बल पर और कुछ हद तक गठबंधन के सहयोगी दलों को अपने-साथ ले आने में सफल होने के कारण हुआ, जबकि 2004 और 2009 में कांग्रेस

को भी कामयाबी के लिए गठबंधन का लाभ मिला था.

चुनाव-पूर्व शर्तों का सामान्य तौर पर निष्कर्ष यही निकलता है कि गठबंधन के सहयोगी-दलों के बीच सीटों के बँटवारे के अनुपात को लेकर समझौता होने में काफ़ी कठिनाई आती है और खास तौर पर ऐसे सहयोगी-दल की माँगों के अनुरूप आपसी तालमेल करने में दिक्कतें आती हैं, जो यह मानकर चलता है कि उसके दल की लोकप्रियता बढ़ रही है. उदाहरण के लिए महाराष्ट्र में कांग्रेस-एनसीपी गठबंधन और भाजपा-शिवसेना का गठबंधन, बिहार में अब तक का भाजपा-जनता दल (युनाइटेड) गठबंधन और पंजाब में भाजपा-अकाली दल का गठबंधन और प. बंगाल में वामपंथीय दलों का गठबंधन और केरल में कांग्रेस के नेतृत्व में यूडीएफ़ गठबंधन. पिछले दो या उससे अधिक चुनावों में इन गठबंधनों का सीटों के बँटवारे का अनुपात लगभग स्थिर रहा है और अगर कभी ज़रूरत भी पड़ी तो उन्होंने थोड़ा-बहुत आपसी समायोजन भी कर लिया. दिक्कत तब आती है जब कोई एक पार्टनर गठबंधन की शर्तों में भारी फेरबदल की माँग करने लगता है. अक्तूबर, 2014 में महाराष्ट्र में कांग्रेस-एनसीपी गठबंधन और भाजपा-शिवसेना गठबंधन के संदर्भ में यही सब हुआ और नये अनुपात के आधार पर नये गठबंधन बनने लगे.

सन् 2014 में भाजपा ने कई नये गठबंधन किये. इनमें से अधिकांश गठबंधन पिछले गठबंधनों के मुकाबले अधिक अनुकूल शर्तों के आधार पर किये गये और साथ ही पिछले प्रमुख गठबंधनों (शिवसेना, अकाली दल) को भी यथास्थिति बरकरार रखा गया. इस प्रकार सन् 2014 में भाजपा ने दस राज्यों में चुनाव-पूर्व गठबंधन किये, जबकि सन् 2009 में इसके मुकाबले छह गठबंधन ही किये थे, जिसमें दोनों ने ही - भाजपा ने और उसके सहयोगी दल (दलों) ने सीटों पर चुनाव लड़े. इनमें से सात राज्यों (बिहार, तत्कालीन आंध्र प्रदेश, तमिलनाडु, हरियाणा, केरल, मेघालय और उ.प्र.) में नये गठबंधन थे और इनकी शर्तें भी अधिक अनुकूल थीं.

न केवल भाजपा ने लोकसभा की कुल 543 सीटों में से अधिकांश 282 सीटें जीत लीं,बल्कि अपने चुनाव-पूर्व गठबंधन के सहयोगी दलों के साथ एनडीए की अत्यधिक बहुमत की सरकार भी गठित कर ली और लोकसभा में उनकी सीटों की संख्या 334 तक पहुँच गई. लेकिन सवाल अभी भी यही बना हुआ है कि क्या आगामी चुनावों में भी स्थिरता बनाये रखने के लिए भाजपा का बहुमत बना रहेगा और इन गठबंधनों की प्रासंगिकता बनी रहेगी.

भाजपा द्वारा जीती गई 282 सीटों में से 57 सीटें ऐसी हैं, जो ऐसे राज्यों से जीती गई हैं जहाँ भाजपा को जीतने के लिए अपने गठबंधन के सहयोगी दलों पर बहुत हद तक निर्भर रहना पड़ा है (इसमें उ.प्र. की सीटें शामिल नहीं हैं, जहाँ *'अपना दल'* एक बहुत ही छोटा सहयोगी दल है). ये राज्य हैं महाराष्ट्र (23 सीटें), बिहार (22), हरियाणा (7), आंध्र प्रदेश (2), पंजाब (2), तमिलनाडु (1). अगर हम यह मान भी लें कि यदि भाजपा इन सीटों पर अपने बल भी चुनाव लड़ती तो सभी 57 सीटें जीत सकती थी, तब भी वर्तमान जोड़ में 19 सीटों की कमी रह जाती और बहुमत फिर भी पूरा न होता. इसलिए 2014 में भाजपा का बहुमत अपने चुनाव-पूर्व सहयोगी दलों के वोट अंतरण पर मुख्यतः निर्भर है. यह प. बंगाल की पिछली विधान सभा में सीपीआई (एम) के बहुमत जैसा ही है, जो अन्य वामपंथी सहयोगी दलों के वोट अंतरण पर मुख्यतः निर्भर था.

<u>राज्यसभा और भाजपा के नेतृत्व वाली एनडीए सरकार के लिए गठबंधन राजनीति का महत्व</u>

यदि हम चुनाव-पूर्व गठबंधन के महत्व को एक ओर रख दें तो हम देखेंगे कि राज्यसभा में विधेयक पारित कराने के लिए गठबंधन से ऊपर उठकर भी गठबंधन राजनीति का केंद्रबिंदु विरोधी दलों पर एनडीए की निर्भरता ही रहेगा. इस समय 245 सीटों वाली राज्यसभा में भाजपा के पास केवल 43 सदस्य हैं और एनडीए के सहयोगी दलों की सीटों को मिलाकर भी यह संख्या 57 तक ही रहती है, जो 123 की आधी संख्या से भी कम है. यदि यह मान भी लिया जाए कि अक्तूबर 2014 में हुए महाराष्ट्र और हरियाणा के चुनावों को मिलाकर अपने कार्यकाल के दौरान भाजपा राज्यों की विधान सभाओं के आगामी चुनावों में अधिकांश सीटें जीत भी लेती है तो भी राज्यसभा में होने वाली रिक्तियों को ध्यान में रखते हुए राज्यसभा में एनडीए को सभी सीटों की तो दूर की बात है, अपने पूरे कार्यकाल में आधी सीटें भी नहीं मिल पाएँगी.

<u>क्षेत्रीय रूप में भाजपा की सीमित मौजूदगी और गठबंधन राजनीति का महत्व</u>

सबसे अंतिम, लेकिन महत्वपूर्ण बात यह है कि गठबंधन राजनीति का महत्व बना रहेगा, क्योंकि भाजपा का घोषित लक्ष्य यही है कि वह उत्तरी और मध्य हिंदी पट्टी के राज्यों और तीन पश्चिमी राज्यों के अपने आधार का और विस्तार करे. इसके लिए उसे संभवतः कर्नाटक और असम को छोड़कर दक्षिण और पूर्व के अन्य राज्यों में सहयोगी दलों की ज़रूरत होगी. इसकी वजह यह है कि उत्तरी और मध्य भारत के हिंदीभाषी राज्यों और संघशासित क्षेत्रों में और तीन पश्चिमी राज्यों और संघशासित क्षेत्रों में जो बहुत प्रचंड बहुमत भाजपा को मिला है, उसके अनुपात में लोकसभा में भाजपा के पास मात्र 52 प्रतिशत का संकीर्ण बहुमत है. भाजपा की 282 सीटों में से 244 सीटें अर्थात् 87 प्रतिशत सीटें इसी हिंदी पट्टी और पश्चिमी भारत के उनके मज़बूत गढ़ से ही आई हैं. दूसरे शब्दों में कहें तो भाजपा ने इस क्षेत्र की 304 सीटों में से 81 प्रतिशत सीटें अपने खाते में कर ली हैं. वस्तुतः इस क्षेत्र की 266 सीटों में से 244 अर्थात् 92 प्रतिशत सीटों पर उसने चुनाव लड़ा था और इस क्षेत्र में उसका वोट शेयर 44 प्रतिशत था. आगामी चुनावों में भी इसी करिश्मे को बनाये रखने की संभावना बहुत ही कम है. भाजपा इस सचाई से वाकिफ़ है. यही कारण है कि वह दक्षिण और पूर्व में अपने आधार को मज़बूत कर लेना चाहती है. यह बात दो ही उपायों से हो सकती है. या तो उसके वोट शेयर में जबर्दस्त उछाल आए, जिसकी संभावना बहुत कम है या फिर क्षेत्रीय पार्टियों के सहयोगी दलों के साथ चुनाव-पूर्व गठबंधन किया जाए.

इन्ही अंतस्सबंधों के कारण गठबंधन राजनीति शासन के लिए एक महत्वपूर्ण नीति बनी रहेगी और केंद्र और राज्यों- दोनों ही स्तरों पर भाजपा की यही चुनावी रणनीति है. महाराष्ट्र और हरियाणा में जबर्दस्त जीत के बाद भाजपा के अध्यक्ष अमित शाह का यह वक्तव्य कि गठबंधन का युग अब समाप्त हो गया है, लंबी अवधि को ध्यान में रखते हुए बढ़ा-चढ़ाकर दिया गया वक्तव्य ही समझा जाएगा.

अदनान फ़ारूक़ी नई दिल्ली स्थित जामिया मिलिया इस्लामिया विश्वविद्यालय में राजनीति विज्ञान के सहायक प्रोफ़ेसर हैं.

ईश्वरन श्रीधरन नई दिल्ली स्थित पैन्सिल्वेनिया विश्वविद्यालय के इंस्टीट्यूट फ़ॉर द एडवान्स्ड स्टडी ऑफ़ इंडिया के शैक्षणिक निदेशक हैं.

हिंदी अनुवादः विजय कुमार मल्होत्रा, पूर्व निदेशक (राजभाषा), रेल मंत्रालय, भारत सरकार <malhotravk@gmail.com> / मोबाइल : 91+9910029919.